International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 12 No. 6 July – August 2025

काव्य में औचित्य की अनिवार्यता

डॉ. सोमनाथ वांजरवाडे

सहयोगी प्राध्यापक (हिंदी),

विवेकानंद महाविद्यालय, छत्रपति संभाजीनगर

Corresponding Author - डॉ. सोमनाथ वांजरवाडे

DOI - 10.5281/zenodo.22548668

भारतीय काव्यशास्त्र का अंतिम और महत्वपूर्ण सिद्धांत है - औचित्य। जिसके कई पहलू हैं जो काव्य को काव्य बनाने में सहायक सिद्ध होते है। औचित्य की काव्य के लिए अनिवार्य शर्त बन गया है। तो आज हम काव्य में अनिवार्यता पर प्रकाश डालेंगे। मानव समाज जीवन समय की धाराप्रवाह में अपना रूप स्वरूप बदलते हुए अविरत रूप से मार्गक्रमण कर रहा है। इस सफर में मनुष्य ने कई सारी चीजों का आविष्कार किया है उसमें कलाओं का आविष्कार किया है वह सबसे महत्वपूर्ण है जो समाज जीवन को अपने भीतर समाते हुए समाज को प्रस्तुत करती रही है। इन्हीं कलाओं में एक सर्वप्रमुख कला है - काव्य या साहित्य का निर्माण। जो सबसे प्राचीन कला मानी जाती है। इसी प्राचीन कला अर्थात काव्य को लेकर भारतीय काव्यशास्त्र के विभिन्न संप्रदायों का आविर्भाव हुआ या विकास हुआ। जिसके बुनियादी छः संप्रदाय है। भारतमुनि से लेकर पंडितराज जगन्नाथ तक जिसकी एक लंबी और सुदृढ़ परंपरा रही है। इन बुनियादी छः संप्रदायों में अंतिम और सर्वसमावेशक सिद्धांत है – औचित्य जिसका भारतीय काव्यशास्त्र में का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। जिसके प्रवर्तक आचार्य क्षेमेंद्र रहे हैं।

साहित्य में औचित्य का तात्पर्य उन सभी तत्त्वों की उचित व्यवस्था और उपयुक्तता से है, जिनके माध्यम से काव्य का निर्माण होता है। काव्य के विभिन्न अंग—रस, भाव, अलंकार, भाषा, पात्र, घटना, शैली आदि जब एक-दूसरे के अनुकूल और सामंजस्यपूर्ण होते हैं, तभी काव्य में सौंदर्य उत्पन्न होता है। इसलिए भारतीय काव्यशास्त्र में आचार्य क्षेमेंद्र ने औचित्य को विशेष महत्व देते हुए इसे काव्य का प्राण कहा है। उनका मानना था कि जिस प्रकार शरीर में प्राण के बिना जीवन संभव नहीं, उसी प्रकार औचित्य के बिना काव्य में न तो सौंदर्य रह सकता है और न ही रस की अनुभूति। अतः काव्य में औचित्य की अनिवार्यता निर्विवाद रूप से स्वीकार की गई है।

सामान्यत: औचित्य का तात्पर्य — योग्यता, उपयुक्तता या उचित संगति से है। काव्यशास्त्र की दृष्टि से यह वह सिद्धांत है, जिसके अनुसार काव्य के प्रत्येक अंग का प्रयोग उसके स्थान, काल, पात्र और प्रसंग के अनुरूप होना चाहिए। जिसे आचार्य क्षेमेंद्र ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'औचित्यविचारचर्चा' में कहा है—

"उचितं प्राहुराचार्याः सदृशं किल यस्य यत्।
उचितस्य च यो भावस्तदौचित्यं प्रचक्षते।।"[१]

अर्थात् जो वस्तु जिसके अनुरूप हो, वही उचित है और उस उचितता का भाव ही औचित्य कहलाता है। इस प्रकार औचित्य काव्य के प्रत्येक तत्त्व में संतुलन और सामंजस्य स्थापित करने वाला सिद्धांत है। भारतीय काव्यशास्त्र के सभी आचार्यों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से औचित्य के अनिवर्यता को स्वीकार किया है। जैसे - भरतमुनि ने अपने ग्रंथ नाट्यशास्त्र में अभिनय, वेशभूषा, भाषा और पात्रों के अनुकूल व्यवहार पर बल दिया है। यह औचित्य का ही प्रारंभिक स्वरूप है। आचार्य भामह ने गुण-दोषों के विवेचन में प्रसंगानुकूलता को आवश्यक माना है। वहीं आचार्य दण्डी ने काव्य के सौंदर्य के लिए भाषा और अलंकार की उपयुक्तता पर बल दिया है। आनन्दवर्धन ने भी रस की सिद्धि के लिए औचित्य को अनिवार्य मानते हुए अनौचित्य को रस-भंग का प्रमुख कारण माना है। अभिनवगुप्त ने भी रस की निष्पत्ति में औचित्य की प्रमुख भूमिका स्वीकार की है। इन सभी विचारों विद्वानों के विचारों के बाद हम यह कह सकते है कि औचित्य काव्य का सबसे अहम और अनिवार्य सिद्धांत है जिसके बिना सरथा एवं सफल काव्य की रचना असंभव है। अत: औचित्य - काव्य हो या जीवन हो उसके लिए उपयुक्त ही नहीं अनिवार्य बन जाता है। अब बात आती है।

काव्य में औचित्य की अनिवार्यता:

काव्य में औचित्य क्यों आवश्यक है, इसे कई बिंदुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है - हम सभी यह जानते है कि काव्य कि असफलता का सबसे बड़ा कारण ही अनौचित्य है। जैसे हम सभी जानते है कि आनंदवर्धन ने 'औचित्य' शब्द का प्रयोग करते समय उसके छः प्रकार निश्चित किए -1) रसौचित्य, 2) अलंकारौचित्य, 3) गुणौचित्य, 4) संघटनौचित्य, 5) प्रबंधौचित्य, 6) रीत्यौचित्य।

1. रसौचित्य: का संबंध रहा है। शब्द और अर्थ का नियोजन औचित्यपूर्ण हो व्याकरण दोष से बचना प्रबंधकाव्य में संधि, घटनादि का प्रयोग रसानुकूल हो, विरोधी रसांगोंका वर्णन न हो। गौण वस्तु, घटना, पात्र, वातावरण का विस्तार औचित्यपूर्ण हो, विभाग, अनुभाव, संचारी के वर्णन में औचित्य का निर्वाह हो।

2. अलंकारौचित्य: के अंतर्गत अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग, अलंकार काव्य में आरोपित न हो, भावों की पुष्टि में योग देनेवाले अलंकारों की

अनिवार्यता, उनका स्थान काव्य में गौण होना चाहिए।

3. गुणौचित्य: काव्य में गुणों का समन्वय रसानुकूल होना चाहिए।

4. संघटनौचित्य: का संबंध वाक्य रचना से है। पात्र की प्रकृति, विषय का स्वरूप, तात्पर्य और योग्यता को स्पष्ट करनेवाली वाक्य रचना होनी चाहिए।

5. प्रबंधौचित्य: प्रबंध काव्य के नियमों का निर्वहण करना चाहिए।

6. रीत्यौचित्य: वक्ता, रस, अलंकार तथा काव्य के स्वरूप के अनुकूल रीति का उचित प्रयोग ही रीत्यौचित्य है।"[२]

आचार्य क्षेमेंद्र द्वारा प्रतिपादित - पद, वाक्य, प्रबंधार्थ, गुण, अलंकार, रस, क्रिया, कारक, लिंग, वचन, विशेषण, उपसर्ग, निपात, काल, देश, कुल, व्रत, तत्त्व, सत्त्व, अभिप्राय, स्वभाव, सार संग्रह, प्रतिभा, अवस्था, विचार, नाम, आशीर्वाद ... आदि। दूसरे शब्दों में, औचित्य के ये भेद काव्य में औचित्य की व्याप्ति के ही परिचायक हैं। काव्य में औचित्य की जहाँ स्पष्ट प्रतीति होती है उसके क्षेमेंद्र ने यह भेद बताए हैं। यों तो औचित्य समस्त काव्य शरीर में व्याप्त रहता है। जिसे विद्वानों ने अपनी सुविधा की दृष्टि से कई विद्वानों ने मोटे तौर पर चार वर्गों में विभाजित किया है:-

1) भाषा विज्ञान तथा व्याकरण विषयक औचित्य:

भाषा के अंग जिसके अंतर्गत - पद, वाक्य, क्रिया, कारक, लिंग, वचन, विशेषण, उपसर्ग, निपात आदि आते हैं। जिन्हें भाषा संबंधी औचित्य कहा जाता है। काव्य में विषय, भाव एवं आवश्यकता के अनुरूप - उचित पद, वाक्य, क्रियाओं का उचित प्रयोग, उचित कारक चिह्नों (विभक्ति) का प्रयोग, उचित लिंगों का प्रयोग होना चाहिए। साथही कथावस्तु के अनुरूप उचित वचनों का उचित प्रयोग, विशेषण और विशेष्य के बीच औचित्य पूर्ण संगति-निर्वाह हो, उपसर्ग का प्रयोग व्याकरणिक संगति के अनुरूप हो, उचित स्थानों पर उचित निपातों के प्रयोग आदि के चलते एक सार्थक काव्य का निर्माण हो जाता है। यदि इन सभी अंगो का उचित प्रयोग नहीं हुआ तो काव्य दोषपूर्ण बन जाता है। काव्य की भाषा उसके विषय और भाव के अनुरूप होनी चाहिए। वीर रस में ओजपूर्ण भाषा। करुण रस में सरल और मार्मिक भाषा। श्रृंगार रस में मधुर और कोमल भाषा। यदि करुण प्रसंग में अत्यधिक कठिन और दुरूह शब्दों का प्रयोग किया जाए, तो पाठक की संवेदना प्रभावित नहीं हो पाएगी। इसलिए भाषा का औचित्य काव्य की प्रभावोत्पादकता के लिए आवश्यक है। इसलिए काव्य में प्रथमत: शब्द संबंधी जीतने भी अंग हैं उन सभी का औचित्यपूर्ण प्रयोग काव्य कि अनिवार्य शर्त बन जाता है।

२) काव्यशास्त्रीय तत्व संबंधी औचित्य:

काव्यशास्त्र से सरल संबंध होने के कारण - प्रबंध, गुण, अलंकार, रस, प्रतिभा, सारसंग्रह, तत्त्व, आशीर्वाद आदि को इस वर्ग में रखा गया है। भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य की आत्मा रस को ही माना गया है। रस सिद्धि के लिए औचित्य का विशेष ध्यान रखना अनिवार्य शर्त होती है। रस की उत्पत्ति तभी संभव है जब सभी तत्त्व उचित और अनुकूल हों। रस निरूपण के महत्वपूर्ण सभी घटक जैसे– विभावानुवाद, संचारी -भावादी आदि का सही प्रबंधन ही होना जरूरी होता है अर्थात रस के उद्भावक और संपोषक सभी तत्वों का औचित्यपूर्ण समावेश सफल काव्य कि निष्पत्ति कराता है। जैसे यदि करुण रस के प्रसंग में हास्यपूर्ण शब्दों का प्रयोग कर दिया जाए, तो रस-भंग हो जाएगा। इसी प्रकार वीर रस में अत्यधिक कोमल और दयापूर्ण भाषा उसका प्रभाव कम कर देगी। शब्द से लेकर अर्थ तक नियोजन औचित्यपूर्ण हो व्याकरण दोष से बचना प्रबंधकाव्य में संधि, घटनादि का प्रयोग रसानुकूल हो, विरोधी रसांगों का वर्णन न हो। गौण वस्तु, घटना, पात्र, वातावरण का विस्तार औचित्यपूर्ण हो, विभाव, अनुभाव, संचारी भाव आदि वर्णन में का निर्वाह औचित्य का हो। जैसे कि – रणभूमि में वीर नायक के मुख से भयपूर्ण वचन कहलवाना अनौचित्य है। इससे वीर रस समाप्त हो जाएगा। अतः रस की निष्पत्ति के लिए औचित्य अनिवार्य है। रस के अलावा प्रबंध काव्य के नियमों का उचित निर्वहण करना चाहिए।

साथ ही रस के अनुरूप अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग काव्य सौंदर्य को बढ़ाता है यदि ऐसा नहीं हुआ तो अलंकार अपनी महत्ता खो देते है और उपहासात्मक बन जाते है। अलंकार काव्य के आभूषण हैं, किंतु उनका प्रयोग तभी उचित है जब वे भावों की अभिव्यक्ति में सहायक हों। अत्यधिक एवं अतिशयोक्तिपूर्ण अलंकार-प्रयोग काव्य को कृत्रिम एवं हास्यास्पद बना देते है। जैसे - किसी शोकपूर्ण प्रसंग में अनुप्रास और यमक की अधिकता हो जाए, तो पाठक का ध्यान भाव से हटकर शब्द-चमत्कार की ओर चला जाएगा। अतः अलंकारों का प्रयोग भी औचित्य के अनुसार होना चाहिए। वहीं काव्य में अर्थ एवं भावों के अनुरूप माधुर्य, ओज आदि गुणों का प्रयोग सौंदर्य की सृष्टि करता है।

३) चरित्र संबंधी औचित्य:

काव्य कि कथावस्तु के अनुरूप चरित्रों के – व्रत (आचरण), सत्व, अभिप्राय, स्वभाव, विचार, नाम का प्रयोग औचित्य पूर्ण होना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। काव्य में पात्रों का चरित्रांकन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। प्रत्येक पात्र का व्यवहार, भाषा, विचार और कर्म उसके चरित्र के अनुरूप होने चाहिए। राजा का व्यवहार राजा के समान, साधु का साधु के समान तथा विदूषक का विदूषक के समान होना चाहिए। यदि कोई वृद्ध व्यक्ति बालकों जैसी चंचलता दिखाए अथवा कोई संन्यासी भोग-विलास

में लिप्त दिखाई दे, तो वह अनौचित्य कहलाएगा। अतः पात्र-चित्रण की सफलता औचित्य पर ही निर्भर करती है।

४) परिस्थिति संबंधी औचित्य:

विषयवस्तु के अनुरूप काव्य में - काल, देश, कुल और अवस्था का औचित्यपूर्ण वर्णन काव्य में किया जाना चाहिए। ठीक वैसे ही समयोचित देश और काल का वर्णन बेहद आवश्यक होता है, तभी वह काव्य विशेष बन जाता है वर्ना ऐतिहासिकता का भंग हो जाती है। इसलिए काव्य में परिस्थिति संबंधी औचित्य महत्वपूर्ण और उतने ही अनिवार्य बन जाते है - इसके अलावा काव्य-सौंदर्य की रक्षा के लिए औचित्य अनिवार्य बन जाता है – जैसे काव्य का मुख्य उद्देश्य सौंदर्य की सृष्टि करना है। जब काव्य के सभी अंगों का सुंदर समन्वय होता हैं, तभी उसमें सौंदर्य उत्पन्न होता है। यदि किसी बालक के मुख से अत्यधिक दार्शनिक बातें कहलवाई जाएँ या किसी तपस्वी को विलासप्रिय दिखाया जाए, तो काव्य का सौंदर्य नष्ट हो जाएगा। औचित्य काव्य को स्वाभाविक और विश्वसनीय बनाता है। काव्य जीवन का प्रतिबिंब है। जीवन में जो स्वाभाविक और यथार्थ है, वही काव्य में भी स्वीकार्य होता है। यदि कवि प्राकृतिक नियमों और मानवीय व्यवहार की उपेक्षा करता है, तो काव्य कृत्रिम और अविश्वसनीय बन जाता है। काव्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं, उसमें उचित उपदेश भी होना चाहिए। जब काव्य में घटनाएँ, पात्र और भाव उचित रूप से प्रस्तुत होते हैं, तभी पाठक उनसे तादात्म्य स्थापित कर पाता है। अनौचित्य पाठक के मन में संदेह उत्पन्न करता है और काव्यानुभूति को बाधित करता है। इसलिए प्रभावोत्पादकता की दृष्टि से औचित्य अनिवार्य है।

काव्य के दोषों से रक्षा के लिए औचित्य का होना अनिवार्य हो जाता है। औचित्य के अभाव में काव्य में कई दोष उत्पन्न हो जाते है जैसे—रस-भंग, चरित्र-दोष, भाषा-दोष, शैली-दोष, असंगति, कृत्रिमता... आदि। औचित्य इन दोषों से काव्य की रक्षा करता है और उसे उत्कृष्ट बनाता है।३

काव्य अनेक तत्त्वों का समन्वित रूप है। इसमें भाव, भाषा, अलंकार, छंद, पात्र और घटनाएँ सम्मिलित रहती हैं। इन सभी तत्त्वों के बीच संतुलन और सामंजस्य स्थापित करना ही औचित्य का कार्य है। यदि इनमें से कोई एक तत्त्व भी असंगत हो जाए, तो संपूर्ण काव्य की प्रभावशीलता कम हो जाती है। औचित्य काव्य को कलात्मक दृष्टि से पूर्ण बनाता है। जिस प्रकार संगीत में स्वर, ताल और लय का सामंजस्य आवश्यक है, उसी प्रकार काव्य में विभिन्न तत्त्वों का संतुलन आवश्यक है। यह संतुलन औचित्य के माध्यम से ही संभव है। क्षेमेंद्र ने औचित्य को काव्य का प्राण माना है। उन्होंने काव्य के विभिन्न २७ अंगों में औचित्य की चर्चा की है, उनके अनुसार जहाँ औचित्य नहीं है, वहाँ काव्य का सौंदर्य नष्ट हो जाता है। औचित्य काव्य का भले ही प्राणतत्व न हो लेकिन औचित्य के बिना साहित्य में

स्वाभाविकता, सुंदरता, पवित्रता नहीं आती है। अतः किसी भी हालत में औचित्य की अवहेलना नहीं की जा सकती। औचित्य काव्य का नियामक तत्व है।

निष्कर्ष:

अंतत: कहा जा सकता है कि औचित्य काव्य का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और अनिवार्य तत्त्व है। यह काव्य के विभिन्न अंगों में सामंजस्य स्थापित करके उसे सौंदर्य, प्रभाव, स्वाभाविकता और रसात्मकता प्रदान करता है। औचित्य के बिना न तो रस की सिद्धि संभव है, न पात्र-चित्रण की सफलता, न भाषा की प्रभावशीलता और न ही काव्य की कलात्मक पूर्णता। आचार्य क्षेमेंद्र ने उचित ही कहा है कि औचित्य काव्य का प्राण है। जिस प्रकार प्राण के बिना शरीर निर्जीव हो जाता है, उसी प्रकार औचित्य के अभाव में काव्य केवल शब्दों का समूह बनकर रह जाता है। संक्षेप में, औचित्य काव्य का वह प्राणतत्व है जो रचना को संपूर्णता, संतुलन और सार्थकता प्रदान करता है। जिस प्रकार उचित जीवन-शैली मनुष्य को स्वस्थ रखती है, उसी प्रकार औचित्य का पालन काव्य को अमर और कालजयी बनाता है। इसलिए यह कहना सर्वथा उचित है कि काव्य में औचित्य की अनिवार्यता निर्विवाद, सर्वमान्य और शाश्वत है।

संदर्भ:

1. भारतीय एवं पाश्च्यात काव्यशास्त्र की रुपरेखा – रामचंद्र तिवारी पृ.३६
2. औचित्य का सैधांतिक विवेचन – एस. तिवारी पृ. ६९
3. भारतीय एवं पाश्च्यात काव्यशास्त्र की रुपरेखा – रामचंद्र तिवारी पृ.४२